बालभवन बालिका विद्यापीठ लखीसराय

कक्षा – षष्ठ **दिनांक -13 -03 - 2021**

विषय -हिन्दी **विषय शिक्षक -पंकज कुमार**

एन, सी, ई, आरटी, पर आधारित

सुप्रभात बच्चों अंधेर नगरी नाटक के बारे में पुनः अध्ययन करेंगे ।

जैसा कि आप पहले ही जान चुके हैं, भारतेंदु नाटक शब्द का अर्थ 'रंगस्थ खेल' ही मानते हैं और कहते हैं कि नाटक शब्द का अर्थ है नट लोगों की क्रिया। रंगमंच की उनकी सक्रियता, रंगांदोलन की संगठित योजनाओं और संस्कृत मंच, लोकमंच, पारसी रंगमंच और विदेशी एवं बंगला मंच, मराठी मंच का ज्ञान और अनुभव उन्हें बराबर हिंदी रंगमंच के लिए प्रेरित करता था। इसलिए उनके नाटकों में । रंगमंच अलग से कोई विचारणीय प्रश्न या विषय नहीं है, वह नाटक में अंतर्निहित है। चूंकि अंधेर नगरी अपनी संवेदना और शिल्प में एक अत्यंत लचीले कलेवर की, रोचक, मुखर, गठी हुई, गत्यात्मक और तीखी चुभन की नाट्य-रचना है इसलिए उसने हिंदी रंगमंच के लिए सार्थक, सर्जनात्मक चुनौतियाँ प्रस्तुत की हैं।

अंधेर नगरी न विशिष्ट और आभिजात्य मंच का नाटक है, न मात्र लोकमंच का। वह न आधुनिक और यथार्थवादी मंच का नाटक है, न पारसी थियेटर का। यह रंगमंचीय प्रकृति की दृष्टि से सबका नाटक है जिसमें प्रबुद्ध, संवेदनशील अनुभवी दर्शक वर्ग से लेकर हज़ारों का जन-समूह और भीड़ आनंद ले सकती है। यह निश्चय ही 'खेल' है। यह स्वतंत्रता के बाद के हिंदी रंगांदोलन की ही महत्वपूर्ण कड़ी नहीं है पर जब से यह लिखा गया तभी से जन-जीवन और रंगमंच के बीचोंबीच है। बल्कि इसका तो लेखन ही रंगमंडली के आग्रह पर रातों-रात रंगमंच पर प्रस्तुत करने के लिए ही हुआ। लोकमंच और पारसी रंगमंच की तरह रंगकर्म और नाटककार का यह संबंध ध्यान देने योग्य है। अंधेर नगरी जनरुचि, मनोरंजन, जन-जागरण, कौतुक को समझने के साथ देश-वत्सलता, समाज-सुधार और युगीन आवश्यकताओं को भी रंगमंच द्वारा पूरा करना चाहता है। इस सोद्देश्यता और संश्लिष्टता के बारे में आप आरंभ से जानकारी पाते रहे हैं। ऐसे समय जब न हिंदी भाषा का पूर्ण विकास हुआ था, न नाटक कला का स्वरूप स्थिर हुआ था, न हिंदी में रंगमंच का कोई स्वरूप और शास्त्र था और देश पर विदेशी शासन था, उस समय हंसी-हंसी में नाटक में इतनी पैनी, सटीक, स्पष्ट शब्दों में बातें कह देना और रंगमंच पर बार-बार खेला जाना इस नाटक की शक्ति का सूचक है। इस छोटे से नाटक में सब कुछ है - पूरा युग, पूरा इतिहास, परम्परा और वर्तमान, काव्य और भाषा की लय, गंभीर संकेत, रंगमंच का व्याकरण और अभिनय-शक्ति की चुनौतियाँ भी। आप समझ सकते हैं कि पूरे बाज़ार दृश्य को अगर अभिनेता समूह

और निर्देशक व्यापक कल्पना-दृष्टि, समकालीन व्यंग्य और प्रयोगशील तरीके से रच दे तो हर युग, हर काल में वह दृश्य नवीन अर्थों में जीवित हो उठता है।

वर्षों तक अंधेर नगरी का मंचन एक प्रहसन के रूप में होता रहा। यह विदित है कि काशी के हिंद्र नेशनल थियेटर ने अंधेर नगरी का सबसे पहले मंचन किया था, बाद में भारतेंदुयुगीन लेखक प्रताप नारायण मिश्र ने कानपुर में इसकी प्रस्तुति (1882) कराई। आलोचक रामचंद शुक्ल ने बलिया में (1884) इसके मंचन का उल्लेख किया है। बाद में 1891 से समकालीन हिंदी रंगमंच के उदय के साथ कल्पनाशील निर्देशकों का ध्यान अंधेर नगरी की ओर गया। सत्यव्रत सिन्हा ने अगर इसे आधुनिक वेशभूषा, प्रयोगात्मक शैली में प्रस्तुत किया तो अन्य कई निर्देशकों ने यथार्थवादी शैली और नौटंकी। शैली में इसकी प्रस्तुति की। 1978 में ब.व.कारंत द्वारा यक्षगान शैली में इसकी प्रस्तुति एक सर्जनात्मक मोड़ था जिसमें परम्परा और आधुनिकता का, रंगमंच के सौंदर्यशास्त्र और समकालीन जीवन का, रचना और पुनर्रचना का अद्भुत मेल था।

आधुनिक भारत में नई सांस्कृतिक क्रांति की आकांक्षा इस नाटक की प्रस्तुतियों से विकसित हुई। इस तरह एक प्रहसन पूर्ण, समग्र, संश्लिष्ट रचना' होता गया और व्यंग्यार्थ खुलते गए, रंगमंच की दिशाएँ - संभावनाएँ बढ़ती गई। जितने ही अधिक इसके मंचन हुए, उतना ही इस नाटक में लोकतंत्रीय रंगमंच' और दृश्यात्मक कविता का विस्तार हुआ। भारतेंदु के नाटक दृश्यों के नाटक हैं। वे वाक्यों, संवादों से कम, दृश्यों की कल्पना और दृश्यों के संयोजन से ही अर्थ-विस्तार और लय का वैचित्र्य पैदा करते हैं। दृश्यों के भीतर ही कई नाट्य-रूढ़ियाँ, गतियाँ, लोकव्यवहार रहते हैं, ध्वनियाँ रहती हैं जिनपर किसी टिप्पणी की आवश्यकता नहीं रहती। बाज़ार दृश्य, दरबार दृश्य, फाँसी दृश्य सबमें आप यह महसूस कर सकते हैं। शब्दों के भीतर से अपने आप दृश्य उभरता है, अभिनय-भंगिमा निकलती है। आखिर क्या कारण है कि भय, आतंक के राजनीतिकसामाजिक वातावरण में भी अंधेर नगरी की प्रस्तुति निःशंक भाव से हो जाती है और बाल रंगमंच, किशोरों और युवाओं के महोत्सवों में भी इसकी प्रस्तुतियाँ होती हैं। निर्देशकों ने इस नाटक को इसकी समकालीन प्रासंगिकता और रंगमंचीय सार्थकता-क्षमता के कारण ही हमेशा उठाया है। पुरानी पुस्तक 'हरिश्चन्द्र' में भी बाबू शिवनंदन सहाय ने इसके प्रदर्शनों का वर्णन किया है इसे मराठी सहित कई अन्य भारतीय भाषाओं में भी पेश किया गया है। इन प्रसंगों से अंधेर नगरी में निहित विविधता और हर आयु वर्ग, हर प्रकृति का सामंजस्य ज्ञात होता है। उसकी भीतरी प्रकृति में बड़ी आत्मीयता, सहज उल्लास और चुलबुलापन है।